[redacted]

[redacted]

वर्ष-१७ अंक-०१
२७ जनवरी २०१९

ओ३म्

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल 32/2018-20
एक प्रति- २०.०० रु.

ऋग्वेद

यजुर्वेद

सामवेद

अथर्ववेद

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है ..

# वैदिक रवि

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा का प्रमुख पत्र

# ※ एक दृष्टि में आर्य समाज ※

- आर्य समाज की मान्यता का आधार सत्य सनातन वैदिक धर्म है।
- सनातन वह है जो सदा से था, सदा रहेगा। सत्य सनातन धर्म का आधार वेद है।
- वेद ज्ञान का मूल परमात्मा है।
- यही सृष्टि के प्रारंभ का सबसे पहला ज्ञान, पहली संस्कृति और समस्त सत्य विद्याओं से पूर्ण है।
- वेद ज्ञान किसी जाति, वर्ण, सम्प्रदाय या किसी महापुरुष के ज्ञान के अनुसार नहीं है और न ही किसी समय व स्थान की सीमा में बन्धा है।
- परमात्मा की कल्याणी वाणी वेद समस्त प्राणियों के लिए और सदा के लिए हैं।
- इसे पढ़ना-पढ़ाना श्रेष्ठ (आर्य) जनों का परम धर्म है।
- ईश्वर को सभी मानते हैं इसलिए विश्व शान्ति इसी ईश्वरीय ज्ञान वेद से संभव है।
- आर्य समाज-अविद्या, कुरीतियों, पाखण्ड व जाति प्रथा जैसी सामाजिक बुराईयों को दूर करने वाला तथा सत्य ज्ञान व सनातन संस्कृति का प्रचारक है।

ओ३म्
वैदिक रवि
मासिक

वर्ष 17 अंक–01

27 जनवरी 2019
(सार्वदेशिक धर्मार्थ सभा के निर्णयानुसार)
सृष्टि सम्बत् 1,96,08,53,119
विक्रम संवत् 2075
दयानन्दाब्द 194

सलाहकार मण्डल
राजेन्द्र व्यास
पं. रामलाल शास्त्री 'विद्याभास्कर'
डॉ. रामलाल प्रजापति
वरिष्ठ पत्रकार

प्रधान सम्पादक
श्री इन्द्रप्रकाश गाँधी
कार्या. फोन : 0755 4220549

सम्पादक
प्रकाश आर्य
फोन : 07324 226566

सह सम्पादक
श्रीमती डॉ. राकेश शर्मा

सदस्यता
एक प्रति – 20–00 रू.
वार्षिक – 200–00 रू.
आजीवन – 1000–00 रू.

विज्ञापन की दरें

| | |
|---|---|
| आवरण पृष्ठ 2 एवं 3 | 500 रू. |
| पूर्ण पृष्ठ (अन्दर) | 400 रू. |
| आधा पृष्ठ (अन्दर का) | 250 रू. |
| चौथाई पृष्ठ | 150 रू. |

# अनुक्रमणिका

| क्र. | विषय | पृष्ठ |
|---|---|---|
| 1. | **सम्पादकीय** | 4 |
| 2. | विदुर नीति, मनुष्यता की सीख | 7 |
| 3. | समय की कीमत | 8 |
| 4. | कविता – ये कैसा गणतन्त्र है | 10 |
| 5. | वेदों की दृष्टि में धर्म का स्वरूप | 12 |
| 6. | सत्संग | 14 |
| 7. | कर्म क्या, भोग क्या ? | 16 |
| 8. | संस्कृत और भारतीय संस्कृति | 17 |
| 9. | राष्ट्र के प्रति ईमानदारी.... | 20 |
| 10. | प्रार्थना कब पूरी होती है ? | 21 |
| 11. | अन्तरंग सभा | 22–23 |
| 12. | इन्दौर के आर्य सभासदों की कार्यशाला | 24 |
| 13 | अभूतपूर्व वेदकथा | 26 |

## फरवरी माह के पर्व त्यौहार एवं जयन्ती

| | | |
|---|---|---|
| 1. | बसन्त पंचमी | 10 |
| 2. | सन्त रविदास जयन्ती | 19 |
| 3. | चन्द्रशेखर आजाद पुण्यतिथी | 27 |

सम्पादकीय –

# जीवन की जय पराजय

**पुनन्तु मा देव जनाः पुनन्तु मनवो धियाः।**
**पुनन्तु विश्व भूतानि पावमानः पुनातु मा।।** ऋग्वेद

मन्त्र में जीवन पवित्र करने की प्रार्थना देवताओं से, श्रेष्ठ पुरूषों से, परमात्मा से की गई। यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है वेदों में एक शब्द भी निरर्थक या जीवन संदेश से रिक्त नहीं है। तात्पर्य यह कि एक एक अक्षर हमारे लिए उपयोगी है।

यह इसलिए भी मान लेना चाहिए क्योकि जो कुछ भी इसमें है वह उस पूर्ण परब्रह्म परमात्मा का ज्ञान है। वह प्रत्येक प्राणी पर निरंतर अपनी कृपा की वर्षा करता रहता है। इसके अतिरिक्त उसका दिया हुआ ज्ञान समान रूप से, सबके कल्याण के लिए, सदा के लिए, सभी स्थानों के लिए है, निष्पक्ष तथा सत्यता से पूर्ण है। यदि उसका ज्ञान भी शंका के घेरे में आ गया तो फिर संसार में दूसरा कोई ऐसा नहीं बचेगा जिस पर कुछ विश्वास किया जा सके।

इसलिए परमात्मा की प्रत्येक सीख हमारे लिए हर दृष्टि से लाभकारी जीवन को उन्नति पथ पर ले जाने वाली है इस पर पूर्ण विश्वास व श्रद्धा होनी चाहिए। यह भी निश्चित है कि ऐसा मानने पर ही हमारा उद्धार है। इसलिए अपने को पवित्र करने की भावना इस मन्त्र में की है, वह हमारे लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण व सार्थक है।

भौतिक दृष्टि से जो उन्नति होती है उसका कुछ समय तक लाभ उठाकर सुख की अनुभूति की जा सकती है। किन्तु कालान्तर में एक समय पश्चात आयु, इच्छा और परिस्थितियों के कारण आयू के कारण, या उनके प्रति अनिच्छा होने से वे सुख या तो निरर्थक हो जाते है और वे ही दुःख के कारण बन जाते है।

जीवन का सही और स्थायी सुख आनन्द तो इस जीवन की सादगी, सरलता,सौम्यता, और सदाचार से ही प्राप्त हो सकता है। ये सारी उपलब्धिया मानवीय अलंकार है, जिनसे जीवन सुशोभित होता है। इन सबका आधार पवित्र मन बुद्धि और आत्मा होती है। बिना इनकी पवित्रता के जीवन पवित्र नहीं हो सकता।

दुर्भाग्यवश आज बाहरी शरीर की शुद्धता को ही शुद्धता मानने का भ्रम मानवीय विचार धाराओं में व्याप्त हो गया है यही समाज की दुर्गति बेहाली और कष्टों का कारण है। नदियों के स्नान मात्र से, अध्यात्मिक स्थलों की यात्रा से, श्वेत, शुद्ध नए वस्त्र पहनकर, नंगे पैर की यात्रा से चन्दन, सुगन्धित पदार्थों के उपयोग से अपने को शुद्ध करने को ही हम अपनी शुद्धता मान रहे है।

इसलिए आज समाज में तन के उजले मन के काले व्यक्तियों की भरमार है। हम यह भूल गए कि पवित्र जीवन वाले ही परमात्मा के अतिप्रिय होते हैं और ऐसे व्यक्ति ही समाज में यश कीर्ति प्राप्त करते है। धनबल,जनबल, के आधार पर कुछ समय के लिए और गले में हार तो कई बार पहने जा सकते है। यह मान–सम्मान ऊपरी और अस्थाई होता है। परन्तु जो समाज का मसीहा बन कर आता है लोगो

के दिलों पर जो राज करता है वह यश कीर्ति को प्राप्तकर अमर हो जाता है। इस यश और कीर्ति का आधार पवित्र जीवन ही हो सकता है।

ऐसे अनेक व्यक्तियों के उदाहरण देखे जा सकते है जिनके पास जब धन था पद पर थे, बाहू बल था तब तक उनके आसपास उनकी हां में हां मिलाने वालों की भीड़ लगी रहती थी। उनका प्रिय बने रहने के लिए वे स्वंय उनका मान सम्मान करते थे और दूसरों से करवाते थे।

किन्तु जैसे ही उक्त बातों का (पद, पैसा, बाहू बल का) अभाव हुआ उनके पास भीड़ छट गई, यहां तक कि बीमारी की स्थिति में भी कोई हाल चाल पूछने नहीं गया और वे उपेक्षा के भी शिकार हो गए।

भूतकाल में किए कर्मों के परिणाम स्वरूप फिर पतन के बोझ से दबा व्यक्ति समय व्यतीत हो जाने पर पछतावा ही करता है। खाली समय में बीते समय में की गई भूलो असावधानियों को अपनी गलती समझते हुए दुःखी होते हैं।

वह जानता है कि जीवन में लिए गलत निर्णय नुकसान देने वाले किए कार्यो का घमण्ड, गरूर, लोकेष्णा, पुत्रेष्णा, वित्तेष्णा के अधीन लिए गए निर्णय उसके अपवित्र, और अज्ञान युक्त ह्रदय का ही परिणाम है।

संसार के अनेक ख्यातिनाम विचारको ने संतो ने मनीषियों ने जीवन पवित्र करने का संदेश हमें दिया ईश्वर को भी प्रिय कौन हो सकता है इस सन्दर्भ सन्त तुलसी लिखते है।

**निर्मल मन जन सो मोहि पावा**
**मोहे कपट छल छिद्र न भावा**

वैसे भी संसार का प्रत्येक व्यक्ति स्वच्छता को पसंद करता है, खाने,पीने, बैठने, वस्त्र, स्थान आदि में वह स्वच्छता का बहुत ध्यान रखता है। परन्तु आचार विचार दैनिक दिनचर्या में वह इससे दूर है इसके प्रति विचार ही नहीं करता। आन्तरिक गुणों की जो जीवन निर्माण की भूमिका निभाते है उनकी उपेक्षा करके बाहरी साज सज्जा में ही उलझा हुआ है। जीवन की पवित्रता न होने के कारण सर्वोत्तम योनी का प्राणी मानव आज अपने ही द्वारा उत्पन्न कारणों से बन्धक बना हुआ है, दुःखी है, राग व ईर्ष्या की ज्वाला में रात दिन जल रहा है।

जीवन के तीन प्रमुख सोपान है **मन, बुद्धी, आत्मा** इनकी पवित्रता जीवन में अध्यात्म और ईश्वर के सानिध्य से ही प्राप्त हो सकती है। इनकी निकटता ही इस संसार के मोह पाशों से दूर करके सुख, शान्ती आनन्द और मोक्ष के पथ से अवगत करवा सकती है। इसकी शुद्धी कैसे हो आचार्य मनु कहते है –

**अद्‌भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।**
**विद्या तपोभ्यां भूतात्मा, बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।।**

अर्थात पानी से शरीर की, सत्याचरण से मन की विद्या और तप से आत्मा की, और ज्ञान से बुद्धी की शुद्धता होती है।

आज इस अमृत तुल्य विचारों को समाज कहां मान रहा है ? यदि ऐसा समझ कर अनुसरण करने लगे तो जीवन की सार्थकता हो जावे।

इस अज्ञानता के कारण ही हम छोटे से अस्थायी, नाशवान भौतिक सुख के लिए स्थायी सुख शान्ती से वंचित हो रहे है स्वंय दुःखी है और अपने कर्मो से दूसरों को दुःखी कर रहे है।

आन्तरिक पवित्रता का रहस्य आपके भोजन में भी छिपा है। स्वच्छ शुद्ध सात्विक भोजन आपके मन को स्वच्छ रखता है पवित्र विचारों का श्रृजन करता है। कालेधन से प्राप्त अपवित्र स्थान पर उगाया, अपवित्र स्थान पर निर्मित, मांसाहारी कंजूस के यहां का तथा निन्दनीय कर्मो में व्याप्त व्यक्तियों के द्वारा बनाया भोजन आपकी मन, बुद्धी, आत्मा को बुरी तरह प्रभावित करता है फिर यही हमारे कर्मो की दशा निर्धारण करते है। इसलिए कहां –

**दीपो भक्षयते ध्वानतं, कज्जलं प्रसूयते।**
**यदन्नं भक्षयते नित्यं ता दृषं जायते मनः।।**

अर्थात जलता दीपक काले अन्धेरे का भक्षण कर प्रकाश देता है और काला काजल बनाता है, उसी प्रकार जैसा अन्त ग्रहण करते है उसी प्रकार से मन होता है। आहार शुद्ध ही सात्विक बुद्धि को देता है–

**आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः।**
**सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृति।।**

इसलिए भोजन कहीं भी, किसी के यहां भी, कैसा भी नहीं करना चाहिए, भले ही भूखा ही क्यों न रहना पड़े, परन्तु भोजन शुद्ध सात्विक ही करें। इस प्रकार पवित्रता का यह मार्ग कहां से मिलेगा, इसलिए परेशान होने की चिन्ता करने की कोई बात नहीं है –

तो उस दयालु पिता ने वह व्यवस्था अपने पवित्र ज्ञान के द्वारा हमे दी है जो सब को पवित्र करती है इस सन्दर्भ में वेद का मन्त्र पठनीय है।

**यथेमां वाचं कल्याणीमावधानी जनेभ्यः।**
**ब्रह्म राजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणार्थ।।**

अर्थात् – वेद की पवित्र कल्याणी वाणी राज, ब्रह्मशक्ति, क्षत्रिय, शूर, सेवक, परिवार सबको पवित्र करती है।

इस प्रकार हम जीवन को पवित्र कर दुःखों, कष्टों, अभावों, चिन्ताओं से मुक्त हो सकते हैं, इस लोक और परलोक की उपलब्धि कर मोक्ष पा सकते हैं, यही जीवन की विजय है। इसके विपरीत तन उजला मन काला करके केवल इस संसार की भौतिकता तक ही सीमित रहना और सारी विपत्तियों से घिरे रहना ही पराजय है। इसलिए ऋग्वेद के पवित्र सन्देश **पुनन्तु मा देव जनाः.......** को आत्मसात कर जीवन पवित्रता की यथार्तता को समझें।

जीवन दर्शन........

## विदुर नीति

**न कुलं वृत्तहीनस्य प्रमाणमिति मे मतिः।**
**अन्तेषूपि हि जातानां वृत्तमेव विशिण्यते।।**

– दूसरा अध्याय श्लोक 41

मेरा ऐसा विचार है कि सदाचार से हीन मनुष्य का केवल ऊँचा कुल मान्य नहीं हो सकता, क्योंकि नींच कुल में उत्पन्न मनुष्यों का भी सदाचार श्रेष्ठ माना जाता है।

## भर्तृहरि शतक (नीति शतक)

**दुर्जनः परिहर्तण्यो विद्ययाऽलङ्कृतोऽपि सन।**
**मणिना भूषितः सर्वः किमसौ न भयंकरः।।**

– श्लोक 53

दुर्जन यदि विद्यावान है तो भी उसे त्याग देना चाहिए अर्थात् उससे सम्पर्क नहीं रखना चाहिए, क्या मणि से विभूषित विषधर से भयंकरता नहीं होती।

**न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धाः**
**न ते वृद्धा ये न वदन्ति धर्मम्।**
**ना सो धर्मो यत्र न सत्यमस्ति।**
**न तत् सत्यं यत्छलेनाभ्यपेत्तम्।**

वह सभा नहीं जिसमें वृद्ध विद्यमान न हों, वे वृद्धजन नहीं जो धर्म की शिक्षा न दें, वह धर्म नहीं जिसमें सत्य नहीं है और वह सत्य नहीं जो छल से परिपूर्ण हो।

महा. उद्योग पर्व 36–30

**जरा सोचिए, विचारिए –**

## "ज्ञान, योग, भक्ति, धर्म"

किसी जिज्ञासु ने वैदिक विद्वान से पूछा कि कृपया बताईए, ज्ञान, योग, भक्ति और धर्म क्या है। सूत्रात्मक रूप में।

वैदिक विद्वान ने अत्यन्त संक्षेप में जिज्ञासु की जिज्ञासा निम्नवत् रूप में शान्त किया।

सुनो ध्यान से वत्स, यदि आपकी बुद्धि ने ईश्वर को वास्तव में जाना है, तो वह ज्ञान हो गया। यदि आपकी एकाग्रता ईश्वर के बारे में काम करती है तो वह योग हो गया। यदि आपका प्रेम ईश्वर के लिए होता है तो सेवा की भावना प्राणीमात्र के प्रति होती है तो वह भक्ति हो गयी। सृष्टि नियम के अनुसार आप अपना कार्य करते हैं, अपने दायित्वों का निर्वाह सम्यक प्रकारेण करते हैं तो वह धर्म हो गया।

बोधकथा

# समय की कीमत

समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता। समय एक बार हाथ से निकल जाने पर वापस नहीं आता। जो लोग समय को बेकार में या व्यर्थ कार्यों में नष्ट करते रहते हैं, समय उन्हें नष्ट कर देता है। इसलिए विद्वानों ने हमेशा से कहा है कि, समय का सदुपयोग करना चाहिए।

जो समय बचाते हैं, वे धन बचाते हैं और बचाया हुआ समय, कमाए हुए धन के बराबर होता है। या दूसरे शब्दों में कह सकते हैं प्रत्येक व्यक्ति की मृत्यु निश्चित है अतः हमारा समय हमारी पूंजी है। व्यर्थ में समय गंवाना पूंजी गंवाना है।

स्वामी विवेकानन्द के जीवन से जुड़ी एक कहानी इस प्रकार है।
एक बार स्वामीजी नदी के किनारे खड़े वापिस लौटती नौका का इन्तजार कर रहे थे। तभी वहां एक पहुंचे हुए सन्यासी आकर उस नदी के जल पर ऐसे चलने लगे जैसे आम आदमी जमीन पर चलता है। उस नदी के किनारे खड़े सभी लोग अचंभित होकर उन सन्यासी बाबा को देखने लगे, परन्तु स्वामी जी ने उस सन्यासी की तरफ कोई विशेष ध्यान नहीं दिया।

वह सन्यासी बार–बार पीछे मुड़–मुड़ कर स्वामी जी को गौर से देखता था। जब उस सन्यासी को लगा कि मेरी इस अनोखी उपलब्धि का स्वामीजी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा तो उसका मन खिन्न हो गया, क्योंकि उस सन्यासी को अपनी इस उपलब्धि पर काफी घमण्ड था। वह वापिस लौट आया और स्वामीजी के पास जाकर बोला, – विवेकानन्द जी, मैंने सुना है कि आप बहुत बड़े ज्ञानी पुरूष हैं। आप हर वक्त ज्ञान भरी बातें किया करते हैं। किन्तु मैं तो एक साधारण सा साधु हूँ, फिर भी आप पानी पर चलने की विद्या को नहीं जानते ?

स्वामीजी ने मुस्कराकर उससे पूछा – आपने इस उपलब्धि को सिद्ध करने में कितना समय व्यतीत किया ?

उस सन्यासी ने गर्व से कहा – स्वमी जी, बारह वर्ष।

इस उत्तर को सुनकर स्वामी जी हँसने लगे और बोले – सन्यासी महाराज! अपने जीवन के अमूल्य बारह वर्ष सिर्फ इस उपलब्धि में गॅवा दिए जो मनुष्य जाति के लिए किसी भी काम का नहीं। मात्र एक या दो रूपए देकर नदी के इस पार से उस पार तक उतरा जा सकता है। ऐसी तुच्छ सी उपलब्धि जिससे मात्र कुछ एक सिक्के बचते हों, के लिए आपने अपने जीवन के बारह वर्ष अर्थात एक बड़ी पूंजी गंवा दी।

स्वामीजी के इस जवाब से उस सन्यासी बाबा का सारा घमण्ड चकनाचूर हो गया। वह तुरन्त स्वामीजी के चरणों में नतमस्तक हो गया और कहा – आप सचमुच महान हैं। मैंने जीवन के अनमोल बारह वर्ष व्यर्थ ही नष्ट कर दिये।

इस प्रेरक प्रसंग से हमें यह शिक्षा मिलती है कि व्यक्ति को व्यर्थ के कार्य में ध्यान न देकर ज्ञान की ओर ध्यान देना चाहिए, क्योंकि जीवन का समय निश्चित है। अपने समय को होशियारी से बिताना ही बुद्धिमानी है। व्यर्थ के कार्यों में समय बिताना जीवन को व्यर्थ गंवाना है। संसार की समस्त सम्पत्ति लुटाकर भी बीता हुआ एक पल नहीं खरीदा जा सकता।

"सफल व्यक्तियों की कामयाबी का रहस्य यही है, कि वे समय को पहचानते हैं और उनके सभी कार्य समयानुसार चलते हैं।"

---

जीवन दर्शन..........

# मनुष्यता की सीख

यह घटना उस समय की है, जब क्रान्तिकारी रोशनसिंह को काकोरी काण्ड में मृत्युदण्ड दिया गया। उनके शहीद होते ही उनके परिवार पर मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा। घर में एक जवान बेटी थी और उसके लिए वर की तलाश चल रही थी। बड़ी मुश्किल से एक जगह बात पक्की हो गई। कन्या का रिश्ता तय होते देख कर वहां के दरोगा ने लड़के वालों को धमकाया और कहा कि क्रान्तिकारी की कन्या से विवाह करना राजद्रोह समझा जाएगा और इसके लिए सजा भी हो सकती है, किन्तु वर पक्ष वाले दरोगा की धमकियों से नहीं डरे और बोले कि यह तो हमारा सौभाग्य होगा कि ऐसी कन्या के कदम हमारे घर पर पड़ेगें जिसके पिता ने अपना शीश भारत माता के चरणों पर रख दिया। वरपक्ष का दृढ़ इरादा देखकर दरोगा वहां से चला और किसी तरह से रिश्ते को तोड़ने के प्रयास करने लगा। जब एक पत्रिका के सम्पादक को यह पता लगा तो वह आगबबूला हो गया और दरोगा के पास पहुंचकर बोले, मनुष्य होकर मनुष्यता ही न जाने वह भला क्या मनुष्य ? तुम जैसे लोग बुरे कर्म कर अपना जीवन सफल मानते हैं, किन्तु यह नहीं सोचते कि तुमने इन कर्मों से अपने आगे के लिए इतने कॉटे बो दिये हैं जिन्हें अभी से उखाड़ना भी शुरू करो तो अपने अन्त तक न उखाड़ पाओ। अगर किसी को कुछ दे नहीं सकते तो उससे छिनने का प्रयास भी न करो। सम्पादक की खरी खोटी बातों ने दरोगा की ऑखें खोल दी और उसने न सिर्फ कन्या की मॉ से माफी मांगी विवाह का सारा खर्च भी खुद वहन करने को तैयार हो गया। विवाह की तैयारियां होने लगी। कन्यादान के समय जब वधु के पिता का सवाल उठा तो वह सम्पादक उठे और बोले, रोशनसिंह के न होने पर मैं कन्या का पिता हूं। कन्यादान मैं करूंगा। वह सम्पादक थे – **महान स्वतन्त्रता सेनानी गणेशशंकर विद्यार्थी**

> जैसे एक पहिये से रथ नहीं चलता, उसी प्रकार बिना पुरूषार्थ के भाग्य फलीभूत नहीं देता।
>
> शुक्र नीति 3–67

# ✡ ये कैसा गणतंत्र है ✡

ये कैसा गणतंत्र है,
जहां हर मुख में, स्वार्थ मंत्र है,
सेवा बनाम भ्रष्टाचारी यंत्र है।
मनमानी करने में हर कोई स्वतंत्र है।
देश में नित नए बनते षड़यंत्र है,
कहने को आजाद पर फिर भी परतंत्र हैं।

प्रजा का तंत्र टूटा, रहा
खतरों से देश जूझ रहा।
धबराए आशंकित मन,
रास्ता न कोई सूझ रहा ।

जिसे सौंपी थी नैया,
वही डुबाने में लगा।
कसम ली सेवा की जिसने,
वही देता है दगा।

प्रजातंत्र की जो धज्जियां उड़ाते,
आदर्श पुरूष वे ही कहलाते।
नहीं समझ रहे इनकी चाल,
बेच देगें ये पुरा हिन्दुस्तान।

संविधान की देते दुहाई,
मंच से करते जिसका बखान।
सबसे ज्यादा वे नर ही
कर रहे इसका अपमान।
संविधान के पालन में
है भेदभाव यहां भारी,
प्रजा के लिए जरूरी पर,
मुक्त है, कुर्सीधारी।

स्वतंत्रता का दोहन करता, जो
कहाता वो भाग्य विधाता।
आज ऐसा देश द्रोही भी यहां
सम्मान है पाता।

गणतंत्र का अर्थ बदल गया,
कुर्सी में सबकुछ ढल गया।
राजनीति सेवा नहीं, व्यापार है,
बिन पैसे का कारोबार है।

चहुंओर सत्ता और कुर्सी का नशा है,
जो जन – जन की रगों में बसा है।
यही राजनीति का उद्देश्य है,
बर्बाद हो रहा पूरा देश है।

खुद को बढ़ाने के लिए,
चलता कुर्सी का षड्यंत्र हैं।
चन्द हाथों में गिरफ्त सत्ता,
फिर ये कैसा गणतंत्र है
प्रजातंत्र, गणतंत्र या लोकतंत्र,
कुछ भी कहो यह सब दिखावा है।
परिवार तंत्र फल फूल रहा,
प्रजा के नाम पर, सिर्फ छलावा है।

राष्ट्र से हम सबका नाता है
सबका पुरूषार्थ ही राष्ट्र बनाता है,

मत छोड़ो देश धूर्तो के हवाले,
उपर से उजले, करनी के पूरे काले है।
इन गृह भेदियों से देश की रखवाली जरूरी है,
वर्ना गणतंत्र की सौगात अभी अधूरी है।

**– प्रकाश आर्य, महू**

वृद्ध वो कल्पवृक्ष है, जिनके नीचे सबको शीतल छाया मिलती है। उन्हें अपमानित करने वाले, नुकसान पहुंचाने वाले भी उनसे आशीर्वाद रूपी छांया ही पाते हैं। वृद्ध जन सदा पूजनीय और सत्कार योग्य हैं।

**– आर्य समाज**

# वेदों की दृष्टि में धर्म का स्वरूप

हमने "धर्म" और 'संस्कृति' शब्दों के मूल अर्थ को नष्ट कर दिया है। हमने सब मतों, मजहबों, सम्प्रदायों, पन्थों, मान्यताओं या दृष्टिकोणों को धर्म मानना शुरू कर दिया है। जबकि धर्म तो केवल कोई एक ही हो सकता है और वह भी वही हो सकता है जो सभी को स्वीकार करने योग्य हो, इसलिए वेद में कहा गया है –

**सा प्रथमा संस्कृतिः विश्ववारा।**

(यजुर्वेद 7/14)

वह प्रथम संस्कृति ही विश्व के समस्त मानवों के लिए वरणीय है।

**तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।**

(ऋग्वेद 10/90/16)

धर्म के वे अंग–सत्य, संयम, सदाचार, न्याय, दया, क्षमा, परोपकार व अहिंसा आदि शाखा–प्रशाखा के रूप में सर्वप्रथम वेदों में ही वर्णित हैं। संस्कृत साहित्य में विलोम शब्द के रूप में दो शब्दों की जोड़ी सुप्रसिद्ध है – नूतन व पुरातन। कोई मत या मजहब किसी अन्य मत या मजहब की अपेक्षा नूतन होता है तो कोई पुरातन। वैदिक धर्म सनातन है।

किन्तु सृष्टि के प्रारम्भ से निरन्तर प्रवाहित होती आ रही वैदिक धर्म की यह अजस्त्र धारा गंगा की तरह गंगोत्री से निकलकर आज तक सर्वजनहिताय तथा सर्वजनसुखाय है। यह वैदिक धर्म सार्वजनीन, सार्वकालिक, सार्वभौमिक एवं अजातशत्रु है जो निर्विकार एवं निर्दोष होने के कारण समस्त विश्व का सर्वथा शोधन करता है। यही धर्म विश्ववरणीया संस्कृति भी कहलाती है। जब धर्म वैदिक न रहकर अन्य किसी मतपरक विशेषणों से जुड़ने लगता है तो उस समय मौलिक धर्म की उत्कृष्टता अपने आप समाप्त होने लगती है तथा वह तथाकथित धर्म, संकीर्ण, भाव वाला होकर अपने अनुयायियों को सच्ची मानवता से दूर भी करता है।

धर्म निरपेक्षता की अनर्गल व्याख्या ने ही कुकुरमुत्तों की तरह जगह जगह पर उग आए आधुनिक समस्त मत–सम्प्रदायों, पन्थों एवं मजहबों को उदारता एवं समझौतावाद के कारण धर्म और संस्कृति का जामा पहना दिया है। जिसका परिणाम वर्तमान में हम देख रहे हैं–सर्वत्र धार्मिक विद्वेष, साम्प्रदायिक कट्टरता, मजहबी उग्रवाद, अधिक स्वायत्तता की मांगें व युद्ध विभीषिका। इस प्रकार का तथाकथित धर्म स्वयं को उत्कृष्ट एवं अन्य को गर्हित, हेय व अधम मानता है। ऐसी बात नहीं है कि वैदिक धर्म से पृथक अपनी सत्ता रखने वाले अन्य मतों व मजहबों में कोई अच्छी बात है ही नहीं अपितु इन सभी मतों में जो करूणा, ममता, उदारता, सहानुभूति, सदाचार, अहिंसा आदि गुण हैं वे प्रशंसनीय हैं। समाजों व राष्ट्रों में देश, काल तथा व्यक्ति की प्रवृत्ति के अनुसार खान–पान, रहन–सहन, लोकाचार व पूजा–पद्धतियों में भिन्नता होना स्वाभाविक है, परन्तु उन से धर्म की भिन्नता कदापि नहीं हो सकती।

धर्म सब का एक ही होता है। अध्यात्म से ओत–प्रोत जीवन सत्य, धैर्य, क्षमा, इन्द्रिय–नियन्त्रण, स्वाध्याय, दानकर्ता, परमार्थ, यज्ञमयता, उदारता, पक्षपातहीन, न्याय, अप्रमाद, कर्तव्यपरायणता, उदात्तता, तपस्या, साधना, सन्तोष, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह आदि गुण धर्म के वे शाश्वत अंग हैं जो इन्सान को दानवता से बचाते हुए मानव बनाए रखते हैं। इन्हीं धार्मिक गुणों से एक स्वस्थ समाज व विशाल राष्ट्र की स्थापना हो पाती है।

वैदिक ऋचाएं धर्म को ध्रुव विशेषण से जोड़कर उस की अक्षरता को दर्शाते हुए निश्चित सिद्धान्तों व आचरण के नियमौं की ओर संकेत करती हैं –

**मित्रावरूणौ त्वोत्तरतः परिधत्तां ध्रुवेण धर्मणा विश्वस्यारिष्टयै।**

(यजु. 2/3)

वस्तुतः धर्म एवं संस्कृति आदिकाल से चले आ रहे वे शाश्वत मानवीय कर्तव्य हैं जो अनिवार्य रूप से पालन किये जाते हैं। इस धरा के महर्षियों की अमरवाणी केवल इसी लोककल्याण कारिणी धर्म–ध्वनि का ही उच्चारण करती रही है – **धर्मादर्थश्च कामश्च** अर्थ और काम की प्राप्ति धर्मपूर्वक ही करनी चाहिए।

उपनिषत् के ऋषि ने भी धर्म की सार्थकता को लोकोन्नति में ही देखा है। उसने कहा – **त्रयो धर्मस्कन्धाः यज्ञो अध्ययनं दानम्।** (छान्दोग्य उपनिषद् 2/23/1) यज्ञ, अध्ययन एवं दान के माध्यम से उस ने धर्म का व्याख्यान करने का प्रयास किया है। यज्ञ धर्म का पहला अंग है।

सभी श्रेष्ठ कर्म यज्ञ कहलाते हैं अतः कोई भी अच्छा कार्य करने वाला व्यक्ति सच्चा धार्मिक होता है। अध्ययन जीवन को उत्थान की ओर ले जाता है। इसलिए स्वाध्यायप्रेमी व्यक्ति भी धर्म का पालन माना गया है। दान धर्म का वह पड़ाव है जिस से व्यक्ति मानवता से देवत्व की ओर कदम रखता है।

**– डॉ. विकम कुमार विवेकी**

## अशफाकुल्ला खान

"जाऊँगा खाली हाथ मगर ये दर्द साथ ही जायेगा, जाने किस दिन हिन्दोस्तान आजाद वतन कहलायेगा ? बिस्मिल हिन्दू है कहते हैं "फिर आऊँगा, फिर आऊँगा, फिर आकर के ऐ भारत माँ तुझको आजाद कराऊँगा, जी करता है मैं भी कह दूं पर मजहब से बंध जाता हूं, मैं मुसलमान हूं, पुर्नजन्म की बात नहीं कर पाता हूं, हाँ खुदा अगर मिल गया कहीं अपनी झोली फैला दूंगा और जन्नत के बदले उससे एक पुर्नजन्म ही मागूंगा।"

# सत्संग

जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त करना है। मोक्ष का आर्थ मुक्ति, मुक्ति किससे, किसकी ? मुक्ति दुःखों से, कष्टों से। जब मनुष्य अज्ञान, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश के बन्धनों से मुक्त हो जाता है, तब वह दुःखों से मुक्त हो जाता है। इस मुक्ति तक, मोक्ष तक पहुंचने का मार्ग ढूंढ़ना होगा।

मार्ग भी सत्य पर आधारित हो, भ्रमित करने वाला न हो, ऐसा न हो कि जाना कहीं हो और पहुंचा कहीं और दे, यह नहीं होना चाहिए।

तो यह मार्ग स्वाध्याया व सत्संग से प्राप्त होगा। सत्संग का अर्थ सत्य का जहां संग हो जाए, और असत्य से छूट जावे। प्रायः जनमानस नदियों में जिन्हें तीर्थ नाम से संबोधित किया जाता है उसके स्थान से पुण्य की प्राप्ति मानते हैं। तीर्थ से जीवन उन्नत होता है। परन्तु वह स्नान, वह तीर्थ कौन सा है, जिससे जीवन सफल हो जाता है, इसे समझने में भूल हो रही है। जील स्नान को तीर्थ समझा जा रहा है। जीवन की उन्नति, अवनति, शुभ–अशुभ कर्म, स्वर्ग–नर्क, की प्राप्ति यह सब आत्मा से संबंध रखता है। जो जल से शुद्ध नहीं होते।

इसलिए तीर्थ मानने में सत्संग का बड़ा महत्व बताया है –

**सत्संग परम् तीर्थ, सत्संग पर पदम्।**
**तस्मात् सर्व परित्यज्य, सतसंग सततं कुरू।।**

लोक की पहली पंक्ति में सत्संग को तीर्थ कहा गया – इस तीर्थ का अर्थ भी जीवन को उन्नति प्रदान करने वाला कहा गया।

**जनः येन तरति तत् तीर्थम्।**

जीवन जिससे तर जावे, किससे तर जावे दुःखों से, अज्ञान से भव सागर से तर जावे। तर जावे अर्थात् पार हो जावे, नदी में पथिक जब उसे पार कर लेता है तो उसे तरना और पार न कर पाए तो डूबना कहते हैं।

यह संसार अनेक प्रकार की व्यवस्था, विपदा और सुखों से अनेकर प्रकार की क्रिया कलापों से भरा है, कहीं समतल भूमि है तो कहीं ऊंचे–नीचे पहाड़, कहीं सीधा मार्ग है तो कहीं टेढ़ी–मेढ़ी कटीली झाड़ियों से भरा कंटकाकीर्ण मार्ग भी है। इस प्रकार के विचित्र, संसार को सुगमता, सरलता और सफलता से पार करने का मार्ग तीर्थ हमें दिखलाता है।

तीर्थ की परिभाषा बताते हुए कहा, तीर्थ क्या है ?

**"सत्य तीर्थ, क्षमा तीर्थ, तीर्थमिन्द्रिय निग्रहः। सर्व भूत दया तीर्थ तीर्थ मार्जवमेवच, ज्ञानं तीर्थ तपस्तीर्थ कथितं तीर्थ सप्तकम्।।"**

उपरोक्त दर्शायी सत्य, क्षमा, जितेन्द्रिय, दया, धैर्यता, ज्ञान, तपस्या को जीवन में आत्मसात करना तीर्थ स्नान है। इस प्रकार उक्त ज्ञानमय बातों को जीवन में जो धारण करता है, इन्हें अपने व्यवहार में आत्मसात करता है, वही तीर्थ स्नान करता है।

मात्र जल स्नान को तीर्थ नहीं मानना चाहिए, जल से तो शरीर शुद्ध होता है, आत्मा की शुद्धता जल से नहीं आत्मा की शुद्धता विद्या और तप से होती है। मनु महाराज लिखते हैं –

**अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति, मनः सत्येन शुध्यति, विद्या तपोभ्यां भूतात्मा, बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति।**

स्वामी शंकराचार्य ने भी लिखा –

**तीर्थेषु पशुयज्ञेषु काष्ठ पाषाण मृण्मये प्रतिमायां मनोयेषां ते नरः मूढ़ चेतसः।**

जल तीर्थ को ही जीवन उन्नति का आधार मानना अज्ञानता है।

सत्य ज्ञान, सत्य विवेक सत्य विचारों का स  जन सत्संग से होता है। सत्संग जीवन का नवनीत है, जिसे पाकर जीवन सफल होता है। सत्संग में ज्ञान का प्रकाश और अज्ञान का शमन होता है। किन्तु मात्र भावनाओं के आधार पर कोरी श्रद्धा से सत्संग में सम्मिलित होना लाभकारी नहीं होगा। इसका लाभ तभी होगा जब सत्संग ज्ञान वर्धक, सत्यता से पूर्ण, सर्वहितकारी हो। कहानी, किस्से, मनोरंजक और अज्ञानपूर्ण तथ्यों से होने वाली चर्चा या उपदेश सत्संग नहीं होता है। सत्संग क़ा प्रत्येक क्षण जीवन को सत्य सन्देश देने वाला होना चाहिए, तभी सत्संग का महत्व है।

सत्संग जीवन मुक्ति मोक्ष की राह दिखाता है, कहा गया –

**सत्संगत्वे निसगत्वं, निसंगत्वे, निर्मोहत्वं, निर्मोहत्वे निश्चलत्वं निश्चलत्वे जीवन मुक्तः।।**

अर्थात – सत्संग ही राग, मोह, त्याग व निश्छल भाव का बोध कराकर जीवन को मोक्ष तक ले जाता है।

सत्संग ही जीवन को सम्पन्नता प्रदान कर सकता है, जीवन में धनवान दो प्रकार से होतें हैं एक रूपया, पैसा, मकान, जमीन, जायदाद आदि से भौतिक सम्पत्ति एकत्रित करके सम्पन्न होते हैं। दूसरी सम्पदा आत्मिक सम्पदा है, यह सत्य ज्ञान, अनेक ग्रंथों का अनुसरण कर तथा त्याग भाव शुद्धी, दया, सत्यता और समय से प्राप्त होता है। कहा गया– **"बाहुश्रुतं तपस्त्यागः श्रद्धा यज्ञकिया क्षमा भावशुर्द्धि दया सत्यं, संयमश्चात्म सम्पदः"**

यह जीवन की अनमोल सम्पदा है, भौतिक सम्पदा तो केवल इस जीवन के लिए ही लाभदायक है, आत्मिक सम्पदा इस लोक और उस लोक दोनों के लिए लाभकारी है। यह सब हमें सत्संग से ही प्राप्त हो सकता है। इसलिए सत्संग को तीर्थ व पदम कहा गया।

– **प्रकाश आर्य, महू**

# कर्म क्या ? भोग क्या ?

वस्तुतः जो क्रियाएं हम स्वतन्त्रता से कर सकते हैं और जिनके करने न करने या उल्टा करने का हमको अधिकार होता है वे सब, चाहे छोटी हों, चाहे बड़ी, कर्म की कोटि में आती हैं। हॉ, जो क्रियाएं हम पूर्ण विवशता से करते हैं और जिनके होने में हमारा किंचित भी अधिकार नहीं वे फल की निमित्त मात्र हो सकती हैं क्योंकि उनको हम नहीं करते कोई कराता है। कल्पना कीजिये हम को कोई जल पिलाता है हम पीते हैं। हम को अधिकार है कि न पिएं। तो इस जल का पीना कर्म है परन्तु यदि हम बेहोश पड़े हैं और कोई चिकित्सक हमारा मुँह यन्त्रों से खोल कर पानी डाल देता है तो भोग का निमित्त मात्र होगा और यह क्रिया दूसरे की होगी अपनी नहीं क्योंकि हमने नहीं की। इसके किसी अंश पर हमारा अधिकार नहीं है।

**प्रश्न** – हम कोई काम स्वतन्त्रता से नहीं करते। परिस्थिति करा लेती है। हम परिस्थितियों से जकड़े हुए हैं। हमारे वश में छोटी सी चीज भी नहीं है। स्वतन्त्रता नाम मात्र की है। ईश्वर की इच्छा के विरूद्ध पत्ता भी नहीं हिल सकता।

**उत्तर** – क्या हमारी इच्छा भी परवशता के अधीन है ?

**प्रश्न** – हॉ। दो मनुष्य दो प्रकार की इच्छा करते हैं। एक चोरी की और एक धन की रक्षा की। चोर के जीवन की परिस्थिति बताती है कि चोर अन्यथा कर ही नहीं सकता था और धन का स्वामी धन की रक्षा की इच्छा अपनी परिस्थितियों के कारण ही करता है। संसार का नियम अटल हैं। कोई टाल नहीं सकता। अतः स्वतन्त्रता की दुन्दुभी बजाना व्यर्थ है। जब स्वतन्त्रता नहीं तो क्या कर्म फल ? क्या कर्तव्य और क्या अकर्तव्य ? क्या शुभ क्या अशुभ ?

**उत्तर** – क्या स्वतन्त्रता की इच्छा भी परिस्थितियों के कारण ही होती है ? यदि स्वतन्त्रता कोई चीज नहीं तो हम में स्वतन्त्रता की इच्छा क्यों उत्पन्न होती है ? और हम दूसरे मनुष्य के कर्मों के विषय में यह क्यों कहते हैं कि इसने यह भूल की। इसको ऐसा करना चाहिये था ? या हमको अपने कर्मों पर पछतावा क्यों होता है कि यदि अमुक कार्य हम न करते तो अच्छा होता ?

# संस्कृत और भारतीय संस्कृति

**– प्रो. चन्द्रप्रकाश आर्य, करनाल**

संस्कृत भारत की प्राचीनतम भाषा है। विश्व की प्राचीनतम भाषाओं में इसका सर्वोपरि स्थान है। संस्कृत का साहित्स समस्त भारतीय भाषाओं के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं। संस्कृत भारत की सांस्कृतिक एकता की वाहक है। भारतीय संस्कृति, वैदिक संस्कृति, आर्य संस्कृति, हिन्दू संस्कृति, संस्कृत में ही निहित है। देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक एकता में संस्कृत का अभूतपूर्व योगदान रहा है। संस्कृत का साहित्य पूरे देश में पढ़ा और लिखा जा रहा है। यह पूरे देश में स्वीकृत था। संस्कृत की संस्कृति पूरे देश में मान्य थी। देश की सामाजिक और धार्मिक मान्यताएं तथा आचार–विचार संस्कृत की ही संस्कृति से शासित होते थे और आज भी यह परम्परा जारी है। वेद, उपनिषद्, दर्शन, रामायण, महाभारत, मनुस्मृति आदि संस्कृत के ग्रंथ आज भी पूरे देश में मान्य है। उनकी कथा, चर्चा, परिचर्चा, उनका श्रवण, अध्ययन अब भी होता है।

कश्मीर से केरल पर्यन्त संस्कृत में साहित्य लिखा जाता था और पढ़ा जाता था। कश्मीर में संस्कृत के अनेक विद्वान कवि तथा काव्यशास्त्र के आचार्य हुए हैं। उनमें अधिकतर अभिनवगुप्त, क्षेमेन्द्र, श्रीहर्ष, कल्हण, आनन्दवर्धन तथा मम्मट के नाम उल्लेखनीय हैं। विस्तार के लिए आचार्य बलदेव उपाध्याय लिखित संस्कृत साहित्य का इतिहास 1973 (पृ. 607–609) देखा जा सकता है। मध्यकाल का भक्ति आन्दोलन दक्षिण भारत से आरम्भ हुआ, उसका मूल संस्कृत में लिखित व्यास ऋषि का वेदान्तदर्शन या ब्रह्मसूत्र था। इस पर दक्षिण भारत के अनेक आचार्यों ने अपनी टीकाएं तथा भाष्य लिखे। उनमें शंकराचार्य, आचार्य, रामानुज, निम्बकाचार्य, मध्वाचार्य तथा वल्लभाचार्य का नाम उल्लेखनीय है। ये सभी आचार्य संस्कृत के विद्वान थे। भक्ति आन्दोलन को दक्षिण भारत में लाने वाले स्वामी रामानन्द स्वयं संस्कृत के पण्डित थे। वैष्णवताब्दभास्कर तथा श्रीरामार्जुन पद्धति इसके प्रसिद्ध ग्रंथ हैं।

आधुनिक काल में भी भारतीय नवजागरण का सन्देश देने वाले लोग तथा संस्थाएं संस्कृत तथा भारतीय संस्कृति की विचारधारा से अनुप्राणित थे। इसमें ब्रह्म समाज के संस्थापक राजा राममोहन राय ने स्वयं बनारस जाकर संस्कृत तथा उपनिषदों का अध्ययन किया था। प्रार्थना समाज के संस्थापक महादेव गोविन्द रानाडे भारतीय संस्कृति में गहरी रूचि रखते थे। आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द वेदों के प्रकाण्ड पण्डित थे। थियॉसॉफिकल सोसायटी की श्रीमती एनीबेसेंट ने पूरे देश में घूम–घूमकर भारतीय संस्कृति और आध्यात्म का प्रचार किया। अरविन्द घोष ने पाण्डिचेरी में रहकर उपनिषद्, गीता तथा योग पर अंग्रेजी में निबंध तथा अन्य पुस्तकें लिखीं। राजनीतिक क्षेत्रों में तिलक ने "गीता रहस्य" नामक ग्रंथ लिखा। गांधीजी की गीता में गहरी रूचि थी। वे गीता को अपने जीवन का प्रेरणास्त्रोत मानते थे। नेहरू जी की डिस्कवरी ऑफ इण्डिया में प्राचीन भारत

एवं भारतीय संस्कृति की ही खोज है। श्री विनोबा जी ने गीता प्रवचन भाष्य लिखा। सी. राजगोपालाचारी ने रामायण तथा महाभारत पर अंग्रेजी में पुस्तकें लिखीं तथा महाभारत का अंग्रेजी में अनुवाद किया। श्री के. एम. मुंशी ने भारतीय विद्या भवन बम्बई की स्थापना पर संस्कृत तथा भारतीय संस्कृति में अनेक ग्रंथों का प्रकाशन किया। "हिस्ट्री ऑफ कल्चर ऑफ इण्डियन प्यूपल" (11–12 खण्डों में प्रकाशित) भारतीय विद्या भवन की अमूल्य देन है। ईश्वरचन्द्र विद्यासागर संस्कृत के विद्वान थे। पं. मदनमोहन मालवीय भारतीय संस्कृति के अनन्य भक्त थे। बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय उन्हीं की देन है। स्वामी रामतीर्थ गणित के प्रोफेसर थे किन्तु व्याख्यान वेदान्त पर देते थे। रवीन्द्रनाथ टैगोर की गीतांजलि पर उपनिषदों में गहरी छाप है। डॉ. राधाकृष्णन ने उपनिषदों तथा भारतीय दर्शन की अंग्रेजी में व्याख्या की। इस प्रकार आधुनिककालीन भारतीयों के लिए संस्कृत तथा उसका साहित्य प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रेरणा का स्त्रोत रहा है।

संस्कृत और भारतीय संस्कृति इस्लाम, ईसाई तथा पारसी मतों से भी पहले की हैं। यह बौद्ध और जैन मतों से भी प्राचीन है। महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी ने अपने धर्म के प्रचार के लिए भले ही उस समय पालि और प्राकृत भाषा का सहारा लिया किन्तु प्रशासन तथा साहित्य की भाषा उस समय भी संस्कृत थी। यहां तक कि महात्मा बुद्ध और महावीर स्वामी ने जैन धर्म का प्रचार करने के लिए संस्कत को अपनाया। बौद्ध दर्शन के प्रसिद्ध विद्वान आचार्य नरेन्द्रदेव ने अपनी पुस्तक "संस्कृत साहित्य और उसका परिचय" के अन्तर्गत दसका पूर्ण विवरण दिया है। संस्कृत के महाकवि अश्वघोष बौद्ध थे। उन्होंने संस्कृत में "बुद्धचरित" और 'सौन्दरानन्द' जैसे दो महाकाव्य लिखे हैं। बौद्धों की तरह जैनियों ने भी अपने धर्म के प्रचार के लिए संस्कृत को अपनाया। यही नहीं, श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों सम्प्रदायों के विद्वानों ने संस्कृत को अपनाया। जैन धर्म के कवियों ने भी संस्कृत में महाकाव्य, सुभाषित काव्य, दूतकाव्य, कथासाहित्य, स्त्रोत साहित्य लिखा। भारतीय दर्शन (1975 उत्तर प्रदेश सरकार, हिन्दी भवन, महात्मा गांधी रोड, लखनऊ पृ. 257, 327, 371) में डॉ. उमेश मिश्र ने इसका विस्तृत वर्णन दिया है। एक अन्य ग्रंथ संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास (पृ. 230) में पद्यश्री डॉ. कपिल देव द्विवेदी ने 620 ई. से लेकर 20 वीं शताब्दि के पूर्वार्द्ध तक के संस्कृत के छत्तीस जैन महाकवियों के नाम दिये हैं।

इस तरह संस्कृत पूरे देश को जोड़ने वाली भाषा है। यह सदियों से देश की सांस्कृतिक एकता की भाषा रही है। उत्तर–दक्षिण, पूर्व–पश्चिम बिना किसी भेदभाव से पूरे देश के लोगों ने उसे अपनाया। कश्मीर से लेकर केरल पर्यन्त इसमें साहित्य रचा गया। बौद्धों और जैनों ने भी इसमें साहित्य लिखा। भारत का समस्त प्राचीन साहित्य अधिकांशतः संस्कृत में है। संस्कृत के बिना भारतीय संस्कृति, आर्य संस्कृति, वैदिक संस्कृति अधूरी है।

संस्कृत में आज भी अनेक पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने अपने उपर्युक्त इतिहास में (पृ. 617) भारत के विभिन्न प्रान्तों से प्रकाशित होने वाली 17 प्राचीन पत्र–पत्रिकाओं के नाम दिये हैं। यही नहीं वर्तमान में भी देश के विभिन्न भागों से संस्कृत की 50–60 पत्र–पत्रिकाएं प्रकाशित हो रही हैं। ये पत्र पत्रिकाएं दिल्ली, शिमला, कुरूक्षेत्र, होशियारपुर, जम्मु, काशी, सागर, पटना, उदयपुर, नागपुर, बम्बई, पुणे, मद्रास, पांडिचेरी, श्रीरंगम्, त्रिचूर (केरल), कलकत्ता, राउरकेला, पुरी (उड़ीसा) आदि स्थानों से प्रकाशित हो रही है। विस्तृत विवरण देखें टंकारा समाचार (अगस्त 2001 पृ. 11) आर्य समाज, अनारकली, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली 1, संस्कृत की ये पत्र–पत्रिकाएं कश्मीर से लेकर केरल तक, उड़ीसा से गुजरात तक देश के पूरे भूभाग में फैली हुई है।

देश का कोई ऐसा प्रान्त नहीं जहां संस्कृत न पढ़ाई जाती हो, कोई ऐसा विश्वविद्यालय नहीं जहां संस्कृत का अध्ययन न होता हो। इसके अतिरिक्त संस्कृत के अलग से भी विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, पाठशालाएं, गुरूकुल तथा अन्य शिक्षण केन्द्र हैं जो पूरे देश में फैले हुए हैं। आयुर्वेद चिकित्सा का मूल संस्कृत ग्रंथ में है। योगध्यान का प्रचार–प्रसार आज विश्व में फैल रहा है। उसका मूल संस्कृत ग्रंथ पतंजलि रचित 'योगसूत्र' अथवा 'योगदर्शन' है। राष्ट्रीय संस्कृत संबंधी विस्तृत जानकारी दे सकते हैं। अखिल भारतीय प्राच्य विद्यापरिषद, पूना–4 का नाम उल्लेखनीय है। विश्व स्तर पर भी संस्कृत सम्मेलन अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत परिषद के अधीन समय–समय पर विभिन्न देशों में होते रहे है। इसी प्रकार का एक विश्व संस्कृत सम्मेलन 2001 में नई दिल्ली में हुआ था।

इस प्रकार संस्कृत पूरे देश की सांस्कृतिक भाषा है। यह देश की धार्मिक एवं सामाजिक एकता से जुड़ी हुई है। संस्कृत के बिना इस देश की संस्कृति एवं परम्पराओं को समझ पाना असंभव है। वेदों को विश्व का प्राचीनतम साहित्य माना जाता है। कहा जाता है कि इनमें प्राचीन काल से लेकर आज तक एक भी अक्षर, स्वर या मात्रा का परिवर्तन नहीं हुआ, वे वेद संस्कृत में हैं। पृथ्वी हमारी माता है, हम उसकी सन्तान हैं–'माता भूमिः'। मनुष्य बनो – मनुर्भव। सब प्राणियों को हम मित्रता की दृष्टि से देखें – मित्रस्य चक्षुषा.....। संगच्छध्वं संवदध्वं – सब मिलकर चलें, सब मिलकर आपस में बात करें। द्युलोक से लेकर पृथ्वी तक सर्वत्र शान्ति हो– 'द्यौ शान्तिः.....' आदि वेद के इन सार्वभौम सन्देशों को मानवीय मूल्यों को समझने के लिए संस्कृत का प्रचार–प्रसार करना होगा।

आज स्कूलों, कॉलेजों में संस्कृत का पठन–पाठन कम हो रहा है। पहली कक्षा से अंग्रेजी अनिवार्य रूप से पढ़ाई जा रही है। ऐसी स्थिति में संस्कृत के प्रचार प्रसार एवं पठन–पाठन के लिए देश के मन्दिरों, मठों, अखाड़ों, धार्मिक एवं सामाजिक संगठनों, स्वयं सेवी संस्थाओं, विश्व हिन्दू परिषद, सनातन धर्म, आर्य समाज तथा देश के साधु सन्तों को आगे आना होगा तभी जाकर "वसुधैव कुटुम्बकं" सारी धरती हमारा परिवार है, का सन्देश सार्थक होगा।

साभार – टंकारा समाचार

# राष्ट्र के प्रति ईमानदारी महामात्य आचार्य चाणक्य

उन विलक्षण महामात्य के दर्शन करना चाहता हूं, सम्राट ! विदेशी आक्रान्ता परन्तु पराजित सेनापति ने सम्राट से कहा। सम्राट के आदेश से व्यवस्था की गयीं। राज भृत्य सेनापति को महामात्य से मिलाने ले चले। कल्पनाओं में डूबा सेनापति भृत्यों के साथ राजधानी के राजमार्ग से निकला। धनिकों की बड़ी–बड़ी अट्टालिकाएं, नगर सेठों के ऊंचे–ऊंचे सौध, हाट की चकाचौंध, चारों ओर ऐश्वर्य देखकर वह आश्चर्य में डूब गया। सोचा, इन्हीं में कहीं महामात्य का भी प्रसाद होगा।

जब सामान्यजनों का इतना ऐश्वर्य है तो महामात्य का ऐश्वर्य कैसा होगा ! इन्हीं विचारों में डूबा हुआ सेनापति एकाएक चौंका। अरे नगर तो पीछे छूट गया। कहां ले जा रहे हो ? उसने राजपुरूषों से प्रश्न किया।

महामात्य का निवास निकट ही है। एक झोपड़ी की ओर इंगित करके भृत्यों ने उत्तर दिया। पर्णकुटी और दुनिया के सबसे शक्तिशाली सम्राट के महामात्य का आवास ? सेनापति को विश्वास न हुआ। महामात्य को सूचना दी गयी। विदेशी सेनापति आपसे मिलना चाहते हैं। ससम्मान ले आओ। उन्होंने आदेश दिया। सेनापति ने झोपड़ी में प्रवेश किया और स्तम्भित रह गये। देखा कि एक व्यक्ति छोटा सा अधोवस्त्र और उत्तरीय धारण किये, कृषकाय पर विशाल ललाट, पैनी ऑखों वाला, एक कम्बल बिछाये दीपक के प्रकाश में कुछ लिख रहा है। सेनापति ने अभिवादन किया। मैं आपसे कुछ व्यक्तिगत बातें करना चाहता हूं। सेनापति ने विनम्रता से कहा।

अवश्य ! अवश्य ! महामात्य बोले। अपने सेवक को आवाज दी। यह दीपक ले जाओ, दूसरा दीपक ले आओ। सेवक आशय समझ गया। दूसरा दीपक जलाकर रख गया। वार्तालाप प्रारंभ हो गया, पर सेनापति के मन में बड़ा कौतुहल, एक दीपक बुझाकर उसी प्रकार का दूसरा दीपक जलाया गया। रहस्य क्या है ? आखिर उससे न रहा गया, चलते–चलते उसने महामात्य से प्रश्न किया – महामात्य! धृष्टता के लिए क्षमा करें तो एक प्रश्न पूछूं। निःसंकोच, महामात्य ने कहा।

मेरे आगमन पर आपने एक दीपक बुझाया और दूसरा जलाया, पर दीपक में तो कोई अन्तर नहीं, रहस्य क्या है ?

महामात्य हंसे। भाई रहस्य कुछ नहीं। जब आप आये तो मैं राज्य का कार्य कर रहा था। उस समय मैंने उस दीपक से कार्य किया जिसमें राज्य के धन का तेल जलता था। परन्तु फिर आपसे व्यक्तिगत बात करनी थी, अतः मैंने उस दीपक को बुझा दिया और दूसरा दीपक जलवाया जिसमें मेरे निजी धन का तेल जलता है। सेनापति की समझ में आ गया कि जब तक इस देश में ऐसे महामात्य रहेगें, यह देश पराजित न होगा। अभिवादन करके प्रसन्न मन वह घर लौटा।

सार्वजनिक हित की यह महान दृष्टि रखने वाले वे महापुरूष थे – **चाणक्य।**

# प्रार्थना कब पूरी होती है ?

– डॉ. ओमप्रकाश वेदालंकार

1. प्रार्थना एकान्त में होती है।
2. प्रार्थना अदीन होती है।
3. प्रार्थना सच्चे, भावपूर्ण हृदय से की जाती है।

प्रार्थना सामूहिक भी होती है, परन्तु सामूहिक प्रार्थना 'प्रार्थना' का प्रशिक्षणमात्र है। हम सब मिलकर प्रार्थना के लिए अपने को तैयार करते हैं अथवा यह सोचते हैं कि जब एक व्यक्ति की प्रार्थना में इतना बल है और शक्ति है तब इतने व्यक्तियों की प्रार्थनाएँ मिलकर कितनी शक्तिशाली हो जाएँगे ? अथवा यह भी विचार हो सकता है कि किसी की प्रार्थना तो रंग लाएगी ही और कुछ नहीं तो प्रार्थना का वातावरण तो बनेगा ही। ये सब समाधान मन को सन्तोष देने के लिए हैं। सच्ची प्रार्थना एक व्यक्ति की क्यों न हो, वह अवश्य पूर्ण होती है। इसके लिए प्रथम आवश्यकता है – एकान्तभाव। जहां केवल दो हों, तीसरा नहीं। जहां दो से अधिक हुए वह गोष्ठी हो गई, प्रार्थना कहॉ रही ? दो भी बहुत अधिक हैं, वहां तो एक ही चाहिए।

**यदग्ने स्यामहं त्वं वा घा स्या अहम्।**
**स्युष्टे सत्या इहाशिषः।** – ऋ. 8/44/23

हे अग्ने ! जब तू मैं और मैं तू हो जाएगा तब तुम्हारे सभी 'आशीर्वाद' अवश्य पूर्ण होगें।

वेद तो एक होने की बात कहता है। हमने तो ढोल बजा–बजाकर बहुत को इकट्ठा कर लिया है। सफल प्रार्थना के लिए सदा एकान्त होना चाहिए। होंठ या जीभ भी न हिले। यहॉ तो मन ही मन एक आत्मा का दूसरी आत्मा से मिलन और सम्भाषण है। हम जब भी प्रार्थना करें, बिल्कुल एकान्त में चले जाएं। ईसा, मुहम्मद, दयानन्द सभी ने ऐसा ही किया है। ऋषि दयानन्द तो वैदिक मन्त्रों का अर्थ भी उस प्रभु से एकान्त में समाधि–अवस्था में ज्ञात करते थे, ऐसा प्रसिद्ध है। ऐसा एकान्त जहां कोई न देखता हो। जहां एक नहीं तो कम से कम मैं रहूं या तू रहे। असली बात हृदय की सच्ची प्रेमभरी बात सदा एकान्त में होती है। पुत्री विवाह के बाद जब प्रथम बार सुसराल से लौटती है तब वह अपने मन की बात को मॉ से एकान्त में ही कहना चाहती है और जितना बड़ा दुःख, दिल उतना ही एकान्त चाहता है। उस पत्नि के हृदय के दुःख को वही समझ सकती है जिसके पति को इतनी भी फुरसत नहीं कि अकेले में वह दस मिनिट ही बैठकर अपने मन की बात कह–सुन सके। पत्नी यह चाहती है कि उसका पति कितना ही व्यस्त क्यों न हो, उसे कितनी ही सुख–सुविधाएँ क्यों न उपलब्ध कराएँ फिर भी वह कुछ देर तो एकान्त में बैठे, जिससे वह मन की बात कह सके। एक पति महोदय अपनी पत्नी से सदा यही कहते रहते थे कि मेरे पास समय नहीं है। पत्नी ने झुंझलाकर कहा कि यदि समय नहीं था तो विवाह ही क्यों किया ? भगवान भी यही चाहते हैं। पत्नी भी बच्चों के सामने दिल की बात नहीं कहेगी। उसे कहने के लिए एकान्त चाहिए। शिष्य भी मन में

कोई गुत्थी भरी बात कक्षा में नहीं पूछेगा। इसके लिए उसे एकान्त चाहिए। इसी प्रकार भक्त भी मन की बातं करने के लिए एकान्त चाहता है। उसके प्रभु तो बैठे ही भीतर हैं। भीतर ही भीतर की ये बातें केवल उसका भगवान ही सुनता है, दूसरा नहीं। यदि घर में यह एकान्त सम्भव न हो तो बाहर चले जाएँ। किसी नदी, सरोवर, पर्वत, घाटी या वनप्रदेश में। जहां वह हो या मैं। ये ही बातें करें तभी सच्ची प्रार्थना होगी।

सफल प्रार्थना की दूसरी आवश्यकता है कि वह अदीन होती है। प्रार्थना में दीनता, गिड़गिड़ाहट, हीनता या लघुता की भावना नहीं होती। प्रार्थना और याचना में यही सूक्ष्म अन्तर है। भक्त में अदीनता महान आकांक्षा, स्वार्थहीनता, गौरव तथा विनम्रता की भावनाएँ होती हैं। याचक का मूल्य ही क्या है ? संस्कृत कवि के शब्दों में –

**तृणादपि लघुस्तूला तूलादपि च याचकः।**
**वायुना किं न नीतोऽसौ मामयं याचयिष्यति।।**

तिनके से भी हल्की रूई से भी हल्का याचक होता है। यदि वह इतना हल्का है तो वायु उसे क्यों नहीं ले जाती ? कवि कहता है – इसलिए कि यह याचक मुझ (हवा) से भी मॉगने लगेगा।

प्रार्थना में आकाक्षाएं तो हों, किन्तु दीनता या भिक्षा नहीं। भक्त अपने भगवान से कहता है –

प्रभो ! विपत्तियों से रक्षा करो।
यह प्रार्थना लेकर मैं तेरे द्वारा पर नहीं आया।
विपत्तियों से भयभीत न होऊँ यही वरदान दो।
अपने दुःख से व्यथित चित्त को, सांत्वना देने की भिक्षा नहीं मांगता।
दुःखों पर विजय पाऊँ,
यही आशीर्वाद दो, यही प्रार्थना है।

---

<u>समाचार</u>

# अन्तरंग सभा

सभा की अन्तरंग सभा 20 जनवरी 2019 रविवार को आर्य समाज मल्हारगंज में सम्पन्न हुई। बैठक में अनेक महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर निर्णय लिये गए।

कुछ बिन्दुओं पर लिये गए निर्णयों की जानकारी इस प्रकार है –

1. आर्य समाज के प्रचार–प्रसार की प्रगति के लिए नये पुरोहित व कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। इसलिए सभा द्वारा इच्छुक नवयुवकों को प्रशिक्षित कर उनके माध्यम से पुरोहित व प्रचार कार्य में सहयोग लिया जावेगा।

**संभागीय सम्मेलन का निर्णय –**

0 संभागीय स्तर पर वर्ष में एकबार प्रत्येक संभाग में आर्य सम्मेलन का आयोजन किया जावेगा। इसमें आध्यात्म, संगठन और सामाजिक व राष्ट्रीय मुद्दों पर व्याख्यान व विचार होगा।

सबसे पहले अप्रेल माह में भोपाल, जून में मुरैना संभाग, अगस्त में उज्जैन और रतलाम संभाग, अक्टूबर माह गुना संभाग, नवम्बर माह में इन्दौर संभाग, दिसम्बर माह में ग्वालियर में संभागीय सम्मेलन किये जाने का निर्णय लिया।

इन संभागीय सम्मेलनों में संभाग की प्रत्येक आर्य समाज की पूर्ण सहयोग और भागीदारी रहेगी। स्थान और कार्यक्रम शीघ्र ही संभागीय अधिकारी व कार्यकर्ता निश्चित करेगें।

0 **कन्या गुरूकुल मोहन बड़ोदिया** को माह जुलाई 2019 में प्रारंभ करने का निश्चय किया गया। इस हेतु प्रान्त की समस्त आर्य समाजों से आर्यजनों से मुक्त हस्त से दान देने की अपील सभा द्वारा की गई। लगभग 25 लाख रूपया भवन निर्माण में प्रारंभिक चरण में लगेगा, तब गुरूकुल भवन रहवास हेतु तैयार होगा। पूर्व बैठक में लगभग पौने चार लाख की घोषणा हो चुकी थी, इस मीटिंग में भी 21,000/– श्री विजय गोयल, इन्दौर 21,000/– आर्य समाज, नीमच, 11,000/– श्रीमती पुष्पा आर्य, बोरखेड़ी, महू द्वारा की गई।

0 **वैदिक रवि सदस्यता बढ़ाने हेतु** – सभा की एकमात्र मासिक पत्रिका को और अधिक उपयोगी, रोचक तथा संख्या वृद्धि करने पर विचार किया गया। निर्णय लिया गया कि प्रत्येक परिवार में वैदिक रवि पत्रिका जाना चाहिए ताकि सभा व आर्य समाज की गतिविधियों से, वैदिक विचारों से आर्य समाज के नियमों, सिद्धान्तों की जानकारी परिवार के सदस्यों को भी हो सके।

इन्दौर के श्री श्वेतकेतु वैदिक ने पूर्व में एक साथ वैदिक रवि के 100 सदस्य बनाए थे और भी 100 से 200 सदस्य बनाने की घोषणा की। श्री वैदिक की इस घोषणा पर उनका सदन ने करतल ध्वनि से स्वागत किया।

0 **शतांष** – बैठक में यह भी निर्णय लिया गया कि प्रचार–प्रसार और साहित्य वितरण, कर्मचारी, प्रचारक, इन सबमें सभा निरन्तर वृद्धि कर रही है, आर्थिक सहयोग अत्यन्त आवश्यक है। आर्य समाजों के सदस्यों को अपनी आय का शतांष ईमानदारी से देकर नियमों का पालन करना चाहिए।

इसी प्रकार समाजों द्वारा सभा को दिए जाने वाले दशांष को भी ईमानदारी से देना चाहिए।

क्रमशः........

# इन्दौर के आर्य सभासदों की जिला स्तरीय कार्यशाला

दिनांक 23/12/2018 को आर्य समाज दयानन्दगंज, इन्दौर के सत्संग भवन में सायं 4.30 से 6.30 बजे तक म. भा. आर्य प्रतिनिधि सभा के सभा एवं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के महामन्त्री माननीय प्रकाशजी आर्य की गौरवमयी अध्यक्षता में तथा श्री दक्षदेव जी गौड़ संभागीय उपमन्त्री इन्दौर के संचालन में इन्दौर जिले के आर्य सभासदों की एक महती कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें संयोग से उपस्थित दयानन्द सेवाश्रम थांदला के शिष्ट मण्डल से उनकी स्वर्ण जयन्ती पर विराट वैदिक सम्मेलन दिनांक 11/13–1–19 संबंधी जानकारी प्राप्त हुई तथा यथासम्भवक्ति आदि विविध सहयोग की व्यवस्था की गई।

आर्य समाज के प्रचार प्रसार को सुव्यवस्थित गति प्रदान करने तथा नवीनता लाने के उद्देश्य से आहूत इस कार्यशाला में उद्बोधन माननीय प्रकाशजी के द्वारा हुआ। अपने संक्षिप्त किन्तु विशिष्ट उद्बोधन में उन्होंने कहा कि अब समय आ गया है कि हम अपनी कार्यपद्धति का पुर्नरीक्षण करें। आज की चुनौतियाँ कुछ नए रूपों में हैं अतः कार्य प्रणाली का भी यथावश्यक नवीनीकरण करना होगा। औसम हिन्दुओं में हजारों वर्षों की दासता के कारण कुछ बातें स्थिर हो चुकी हैं। इस कारण जहां वे पचासों को पूजते हैं तो इकावनवें को भी पूज सकते हैं, किन्तु आर्य समाज उन्हें इस स्थिति से उबारने के लिए कृत संकल्प है। हमें भी आज वैचारिक धरातल पर नई चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। अस्तु, इस महनीय कार्यशाला में स्थिर किए जाने वाले प्रत्येक बिन्दु पर आर्यजन वास्तविक कार्य करके वैदिक प्रचार को प्रगत कर परेक्षतः राष्ट्र उत्थान में योगदान करें।

1. **मुख्य रूप से मीडिया, संचार माध्यमों का उपयोग** – निर्णय हुआ कि आवश्यक सहयोग प्राप्त कर स्थानीय समाचार पत्रों के सम्पादकों से सम्पर्क करें।

2. **साप्ताहिक सत्संग में आर्य समाज के इतिहास का वाचन** कर अब साप्ताहिक सत्संगों में आर्य समाज के गौरवशाली इतिहास के अंशों का वाचन प्रारंभ किया जाए। इससे संगठन में गौरवमयी इतिहास की जानकारी सुगठित एवं शिथिलता से मुक्त होना चाहिये।

3. **विशेष कार्यक्रम – युवा या महिला प्रायोजित कार्यक्रम** –

इसी तारतम्य में निर्णय लिया गया कि भविष्य में मास में एक रविवार को महिला अथवा युवा ही सत्संग का आदयन्त आयोजन करें।

4. **सत्संग की पूर्व योजन** – सत्संग के आयोजक पहले से ही कार्यक्रम की रूपरेखा बनाएँ तथा निरन्तरतापूर्वक इसे उपसंहार की ओर ले जाएँ तथा अगले कार्यक्रम की या अन्य आवश्यक सूचनाएँ देना नहीं भूलें। सत्संग सभा द्वारा निर्धारित पद्धति के अनुसार सम्पन्न करें ताकि एकरूपता बनी रहे। नवागन्तुकों का विशेष ध्यान रखें।

**5. नए परिचय** – सत्संग में नए आए हुए व्यक्तियों का विवरण परिचय पुस्तक में अंकित करें। सत्संग की समाप्ति पर स्वयं आयोजक अधिकारी अथवा उनकी ओर से निर्देशित वरिष्ठ सदस्य नवागन्तुक से प्रेमपूर्ण चर्चापूर्वक परिचय प्राप्त कर अगले सत्संग में आने का निवेदन करें।

**6. प्रभातफेरी तथा चल समारोह** – प्रमुख पर्वों तथा अन्य विशिष्ट अवसरों पर प्रभातफेरी तथा चल समारोह निकाल कर नगर–ग्राम में अपनी उपस्थिति एवं शक्ति का भव्य किन्तु सौम्य प्रदर्शन करें। उनके हाथ में सिद्धान्तों की तख्तियाँ हों।

**7. त्रैमासिक जन सभा** – तीन माह में एक बार नगर में जन सभा जैसा एक सामूहिक कार्यक्रम रखा जाए, जिसमें आर्य सिद्धान्तों के मर्मज्ञ किसी विद्वान को बुलाना चाहिए। समाजें चाहें तो इन्हें अपने चार विशिष्ट पर्वों के साथ आयोजित कर सकते हैं।

**8. हिन्दू संस्थाओं के लिए लक्षीभूत विशिष्ट आयोजन** – न्यूनातिन्यून वर्ष में एक बार गाँधी हॉल अथवा अन्य सार्वजनिक स्थान पर रचनात्मक शैली के व्याख्यान एवं आयोजन किए जाएँ, जिसमें हिन्दू संस्थाओं के प्रमुखों को आमन्त्रित किया जाए।

कार्यशाला के समापन के अवसर पर माननीय गोविन्दरामजी आर्य उपप्रधानजी द्वारा कार्यकर्ताओं का आभार तथा श्री दिनेशजी गुप्ता संयोजक द्वारा सुव्यवस्था हेतु धन्यवाद प्रकट किया गया। एक सार्थक निर्णय के साथ कार्यशाला सम्पन्न।

**– रमेशचन्द्र चौहान**
इन्दौर

## आवश्यकता ह

मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा के अन्तर्गत कार्य करने के इच्छुक व्यक्तियों को सभा आवेदन पत्र आमन्त्रित कर नियुक्ति करेगी।

आवेदन कर्ता की आयु 25 से 50 वर्ष तक होना चाहिए। किसी गुरूकुल से शिक्षा प्राप्त व्यक्ति को प्राथमिकता। इसके अतिरिक्त कम से कम कक्षा 12 वीं तक जिसने अध्ययन किया हो ऐसे व्यक्ति आवेदन कर सकते हैं। आवेदक स्वस्थ और शाकाहारी तथा किसी भी प्रकार का नशा, बीड़ी, तम्बाकू, सिगरेट आदि का सेवन न करता हो, चरित्रवान हो।

प्रशिक्षण के पश्चात किसी आर्य समाज में नियुक्ति अथवा सभा द्वारा किसी क्षेत्र में नियुक्ति की जावेगी। प्रशिक्षण काल में रहने, भोजन, दूध आदि की व्यवस्था सभा की ओर से तथा प्रशिक्षण समय में 1000/– की राशि व्यक्तिगत व्यय हेतु प्रदान की जावेगी।

प्रशिक्षण पश्चात सभा द्वारा योग्यता का परीक्षण किया जावेगा तत्पश्चात उचित दक्षिणा प्रतिमाह प्रदान की जावेगी। जो योग्यतानुसार प्रारंभिक दक्षिणा 5,000 से 10,000 रू. मासिक तक हो सकती है।

प्रशिक्षण प्राप्त करने के उपरान्त कम से कम 5 साल सभा के अन्तर्गत प्रचार या पौरोहित्य कार्य करना अनिवार्य शर्त है।

इच्छुक व्यक्ति 15 मार्च के पूर्व आवेदन (**प्रकाश आर्य, आर्य समाज महू (म. प्र.) जिला इन्दौर पिन – 453441 पर**) करे।

# आर्य समाज रतलाम में अभूतपूर्व वेदकथा सम्पन्न

रतलाम नगर की दोनों आर्य समाजों के संयुक्त प्रयास से 5 दिवसीय प्रचार कार्यक्रम सम्पन्न हुआ। रेल्वे कॉलोनी विशाल परिसर में 5 दिवसीय वेदकथा का आयोजन दिसम्बर 29 से 2 जनवरी तक किया गया था। कार्यकर्ताओं ने पूरी योजना व प्रयास आर्य समाज में आर्य समाज के सदस्यों से अधिक प्रयास पौराणिक विचारधारा के व्यक्तियों को आमन्त्रित करने में किया। परिणाम स्वरूप 90 प्रतिशत से अधिक उपस्थिति उनकी ही रही। कार्यक्रम में जितनी व्यवस्था श्रोताओं के लिए की गई थी उससे काफी अधिक मात्रा में उपस्थिति प्रतिदिन बढ़ती गई, ऐसा हमने कभी विचार ही नहीं किया था। जितने भी श्रोता आए उनसे हमने पूछा कि यह कार्यक्रम आपके लिए पहलीबार सुनने में आया है आपको कैसा लगा। कई श्रोता तो इस प्रश्न पर भावुक हो जाते और कहते जिन्दगी की पहली सही कथा सुनी, ये तो और अधिक दिन की होना थी। इस प्रकार कथा में अधिकांश पढ़ेलिखे महिला पुरूषों ने इसे सुनकर सराहा और आगे सहयोग देने का आश्वासन भी दिया। सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि जो भी आकर बैठा वह तीन–साढ़े तीन घण्टे तक कथा सुनते रहा, एक बार भी बीच में नहीं उठा। रतलाम नगर के लिए खास करके यह आर्य समाज के लिए पहला अवसर था। इससे कई व्यक्ति आर्य समाज से जुड़ गये।

कार्यक्रम में दूर–दूर से श्रोता आए और पॉचों दिन सुना। कार्यक्रम की बागडोर नवयुवकों ने संभाली और मार्गदर्शन वयोवृद्ध नेता भगवानदासजी अग्रवाल, गुप्ताजी, श्याम भाई सोनी।

अन्त में इतना ही कहना चाहेगें जो हमने सोचा था उससे कहीं अधिक हमें सफलता मिली, आगे कार्य करने का हौसला बढ़ा।

**– अखिलेश मिश्रा, प्रकाश अग्रवाल, रतलाम**

**प्रिय पाठकवृन्द,**

वैदिक रवि आपका अपना, अपनी सभा का पत्र है। प्रयास किया जा रहा है कि यह अत्यन्त रोचक, ज्ञानवर्धक पत्रिका बनें। हमारी अपनी बात उन लोगों तक भी पहुंचना चाहिए जो वैदिक विचारों से दूर हैं। इसी भावना से पत्रिका का सम्पादन किया जा रहा है जिसे प्रत्येक व्यक्ति पढ़े और इसे पसन्द करे। इसके अधिक से अधिक पाठक हो सकें, इसलिए वैदिक रवि के ग्राहक संख्या बढ़ाने में सहयोगी बनें, अपने परिवार, मित्रों, सगे संबंधियों को इसके ग्राहक बनाइए। समयावधि पूर्ण होने पर अपनी सहयोग राशि कृपया भेजें।

**विशेष–बार–बार निवेदन किया जा रहा है कि पत्रिका का और अच्छा स्तर बनें। इस हेतु अपने या स्थापित विद्वानों के लेख, विचार, कविता, समाचार महू के पते पर प्रेषित करें। कृपया इस ओर ध्यान देवें।**

# प्रांतीय सभा से प्रचार हेतु पुस्तकें व स्टीकर प्राप्त करें

वेद परमात्मा का दिया हुआ सृष्टि का प्रथम पवित्र ज्ञान है, जो पूर्ण है सबके लिए है, सदा के लिए है, वही सनातन और धर्म का आधार है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर को मानने से पहले उसे जानना आवश्यक है, ईश्वर वही है जो-सच्चिदानन्दस्वरूप निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

एक सफल, सुखी, श्रेष्ठ जीवन के लिए मात्र भौतिक सम्पदा धन, सम्पत्ति, मकान ही पर्याप्त नहीं है, आत्मिक सम्पदा, जो आत्मा, मन और बुद्धि की पवित्रता व विकास से प्राप्त होती है, वह भी आवश्यक है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना ■ पढ़ाना और सुनना ■ सुनाना सब आर्यों (श्रेष्ठ मानवों) का परम धर्म है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

हमारा राष्ट्रीय कर्तव्य

...हम और आपको अति उचित है कि जिस देश के पदार्थ से अपना शरीर बना, अब भी पालन होता है, आगे भी होगा, उसकी उन्नति तन-मन-धन से सब जने मिल के प्रीति से करें।

महर्षि दयानन्द सरस्वती

॥ ओ३म् ॥

सम्प्रदायों, मजहबों की स्थापना का आधार विभिन्न मानवीय विचार धाराएं हैं, इसलिए वे अनेक हैं। किन्तु धर्म उस एक परमात्मा का ज्ञान हैं, इसलिए सब मनुष्यों का धर्म भी एक है, वही सबको संगठित करता है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

ईश्वर एक है, उसके गुण-कर्म और स्वभाव अनेक है, इसलिए हम उसे अनेक नामों से पुकारते हैं। किन्तु उसका मुख्य नाम ओ३म् है, उसी का स्मरण करना चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

स्तुति, प्रार्थना, उपासना, पूजा हमारा व्यक्तिगत धर्म है, किन्तु पूर्ण धर्म पालन तो व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय और विश्व धर्म के पालन से होता है।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

आर्य समाज

॥ ओ३म् ॥

प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

आर्य समाज

# मानव कल्याणार्थ

## ※ आर्य समाज के दस नियम ※

1. सब सत्यविद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सब का आदि मूल परमेश्वर है।
2. ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरुप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य पवित्र और सृष्टिकर्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।
3. वेद सब सत्यविद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।
4. सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।
5. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।
6. संसार का उपकार करना आर्यसमाज का मुख्य उद्देश्य है, अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।
7. सब से प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार यथायोग्य बर्तना चाहिए।
8. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।
9. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में संतुष्ट न रहना चाहिए, किन्तु सबकी उन्नति में ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
10. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम में सब स्वतन्त्र रहें।

एम.पी.एच.आई.एन. 2003 12367

पंजीयन संख्या म.प्र./भोपाल/32/2015-17

अवितरित रहने पर कृपया निम्न पते पर लौटायें

**मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा**

तात्या टोपे नगर, भोपाल-462003(म.प्र.)

मुद्रक, प्रकाशक, इन्द्र प्रकाश गांधी द्वारा कौशल प्रिन्टर्स, भोपाल से मुद्रित कराकर
मध्य भारतीय आर्य प्रतिनिधि सभा कार्यालय, तात्या टोपे नगर, भोपाल से प्रकाशित। संपादक - प्रकाश आर्य, महू

AMIT CHATURVEDI # 98262-7106